Text Information – Shuka Samhita: Chapter 1: Quarter 2 to 4

Dialogue Between – Shuka and Janaka

शुक संहिता

कथं ब्रह्मविदां मध्ये संवादोऽयमजायत।
कथं वा विष्णुराताय त्वया पूर्वं प्रबोधितम्॥
गोलोकाख्यं च किं स्थानं यत्र संप्रति तिष्ठम्।
एतन्मे भगवन्ब्रूहि शुक कारुणिकोत्तम॥

अर्थ - जनकजी बोले कि ब्रह्मवादियों के मध्य में यह वाद कैसे हुआ और विष्णुरात (परीक्षित) जी के लिये आपने कैसे पूर्व में बोध किया और गोलोक धाम नामक परमस्थान क्या है ? जहां परीक्षित जी हैं यह सब भगवन् ! करुणास्थान शुकदेवजी ! मुझे कहिये। बहुलाश्व राजा के यह वचन सुनकर शुकाचार्य स्वामीजी बोले।

पुराहं ब्रह्मणो लोके उषित्वा शाश्वतीः समाः।
ब्रह्मवादे जायमाने सिद्धांते ब्रह्मवादिनाम्॥
रामः सर्वं हरिः सर्वमित्यश्रौषं मुहुर्मुहुः।
ततः श्वेतद्वीपपतेरनिरुद्धस्य संसदि॥
ब्रह्मप्रसंगवार्ता राम एव विधिः श्रुतः।
राम एव सदा ध्येयो ज्ञेयः सेव्यश्च साधुभिः॥

इत्य श्रौषमहं राजन् सिद्धांतेषु मुहुर्मुहुः ।
ततोऽनंतस्य शेषस्य साक्षान्नारायणात्मनः ॥
सदा सुसंगतोऽश्रौषं राममेव कथाविधिम् ।
नातः परतरं वेद्यं रामत्रैलोक्यनायकात् ॥
एक एव परं ब्रह्म रामो वेदेषु गीयते ।
इति श्रुत्वा विनिश्चित्य श्रीरामचरितं मया ॥
निर्मथ्य सर्वशास्त्रेषु संचितं पठितं स्मृतम् ।
स्थापितं हृदये नित्यं सर्वस्वं प्राणजीवनम् ॥

शुकाचार्य जी बोले कि - पूर्वकाल में हमने ब्रह्मवादियों के मध्य ब्रह्मवाद से उत्पन्न यही सिद्धान्त बार बार सुना कि :- श्री राम ही सभी के दुखों का हरण करने वाले भगवान हरि हैं (दुःखं हरतीति हरिः) । इसके अतिरिक्त भी श्वेतद्वीप के स्वामी भगवान अनिरुद्ध के सानिध्य में ब्रह्मप्रसंग वार्ता में हमने श्रवण किया कि परब्रह्म श्री राम ही सर्वध्येय (सबके द्वारा ध्यान करने योग्य) हैं। श्री राम ही सभी साधु जनों के सेव्य हैं। हे राजन् ! ऐसा मैंने बार बार सुना है । उसके पश्चात भगवान श्री नारायण के अंतरात्मा स्वरूप श्री अनन्त शेष प्रभु से हमने श्री राम जी की ही कथा को श्रवण किया है। उन्होंने हमें यही समझाया कि त्रैलोक्यनायक भगवान श्री राम जी से परे जानने योग्य और कोई नही है। सभी वेदों में जिनका गान हुआ है, वही एक मात्र परब्रह्म श्री राम हैं। उनसे परे कोई और तत्त्व नही है। यह जो सिद्धान्त है इसे मैने श्रीरामचरित को सुनकर, सर्वशास्त्रों को मथकर, संचित करके, इसे सुनकर अपने हृदय में हमने नित्यपूर्वक सर्वस्व प्राणजीवन श्री राम को स्थापित किया है ।

कदाचिद्गोलोकमध्ये जातोऽहं स्वेच्छया नृप ।
जाता गावः कामदुघाः शाखिनः कल्पशाखिनः ॥
यत्र वृन्दावनं नाम साक्षात्कृष्णवनं महत् ।
यत्र गोवर्द्धन गिरिर्मणिधातुविचित्रितः ॥
यत्र कल्लोलकलिता कालिन्दी सरितां वरा ।
तस्यास्तीरेषु पुष्पाढ्यं कदंबद्रुमकानने ॥
यत्र रासरसाऽवेशमत्ताः श्रीगोकुलांगनाः ।
यत्र क्रीड़ति कैशोरवेषः श्रीकृष्णचंद्रमाः ॥
मुरलीवादनपरो रूपमाधुर्य्यवारिधिः ।

लीलाधिदेवता तस्य यत्र श्रीवृषभानुजा ॥
सुंदरी राधिका नाम रतिकोटिविचत्वरा ।
यत्र लीलारसांभोधौ ब्रह्मानंदसुधाकणः ॥
न ज्ञायते कविकल्पैर्भक्तिसारैकवेदिभिः ।
गोपेन्द्रो यत्र नंदाख्यस्तस्य घोषाः सभादयः ॥
दिवानिशं प्रवर्द्धिष्णुर्महामंगलमंडितः ।
कृष्णवात्सल्यरसभूर्यशोदा यस्य गेहिनी ॥
महाभाग्या महोदारा यत्र गोपा मुदान्विताः।
न यत्र म्रियते कश्चित्कालमायातिगेऽद्भुते ॥

शुकाचार्य्य जी बोले कि हे राजन्! कभी गोलोक के मध्य में हम गए तो हमने देखा कि वहां हजारों कामधेनु गाय, हजारों वृक्ष कल्पवृक्ष के समान विद्यमान हैं। वहां श्री कृष्णचन्द्र जी का महान वन वृन्दावन सुशोभित है। वहां मणियों और रत्नों से युक्त गोवर्धन पर्वत विचित्र शोभा दे रहा है। वहां कल कल करती नदियों में श्रेष्ठ श्री यमुना जी प्रवाहित हो रही हैं। उसके तट पर पुष्पों से युक्त सुन्दर कदम्ब वन है। वहां रास में उन्मत्त गोकुलांगनाएं हैं और श्री कृष्णचन्द्र किशोर वेश में क्रीड़कर रहे हैं। वे मुरलीवादन में तत्पर हैं और रुपमाधुर्य की जलधि हैं। वहां लीला की स्वामिनी (लीलादेवी), अनंत कोटि रतियों की सुन्दरता को भी लज्जित करने वाली श्री वृषभानु पुत्री राधा जी विराजती हैं। उस लीला रस के सागर में ब्रह्मानन्द सुख के सुंधा कण हैं। इसे बड़े बड़े ज्ञानी लोग नही जान सकते हैं, केवल भक्ति के सार को जानने वाले ही जान सकते हैं। वहां सब गोपों में श्रेष्ठ श्री नन्द हैं, जिनकी सभा मण्डली से सुंदर शोर हो रहा है। दिन और रात महामंगल शोभा की वृद्धि हो रही है। वहां श्री कृष्ण जी के वात्सल्य में मग्न श्री नन्द जी की धर्मपत्नी श्री यशोदा जी हैं,जिनका महाभाग्य है ऐसे उदार गोप सखा आनन्द से परिपूर्ण विराज रहे हैं, वहां किसी की मृत्यु नही होती, यह स्थान काल और माया से रहित है।

अलौकिको यत्र रविर्बोधयत्यंबुजाकरम् ।
तथा विलक्षणश्चन्द्रो भुंक्ते कैरविणीर्निशि ॥
नित्योत्साहो नित्यसुखं नित्यकेलिरसोदयः ।
नित्यनव्यतरं रूपं नवीनं यत्र मंगलम् ॥
तत्र गत्वा समाश्रित्य दिव्यश्री यमुनाजले ।

वंशीवटतरोर्मूले नटंतं श्यामसुन्दरम् ॥
ददर्श गोपिकावृन्दैः सह रंजितकाननम् ।
तत्र ब्रह्मादयो देवाः कोटिजन्मार्जितैः शुभैः ॥
गोपिकाभावमासाद्य रमणं रमयंति ह ।
ऋषयः श्रुतयश्चैव गोपिकाभावभाविताः ॥
क्रीडंति प्रभुणा साकं महासौभाग्य मंडिताः ॥
तत्र गत्वा रसावेशादुच्चैर्गानकलस्वरैः ॥
अतीव रंजयामास गोपीमाधवयोर्मनः।
दृष्टो मया च तत्रैव पाण्डवेयो महामनाः ॥
परीक्षिन्नाम नृपतिः श्रुत्वा भागवतं पुरा ।
श्रीभागवतवक्तारं वंवदे मां पुरातनम् ॥

वहां अलौकिक सूर्य कमलों को प्रफुल्लित कर रहे हैं। उसी प्रकार विलक्षण चन्द्रमा भी कुमुदिनी का रस ले रहे हैं। वहां नित्य उत्साह नित्य सुख नित्य केलि रस का उदय हो रहा है। जहां नित्य नव्यातिनव्य रुप प्रकाशित हो रहा है और नित्य नवीन मंगल हो रहे हैं। वहां जाकर दिव्य श्री यमुना जल में स्नानादि कर हमने वंशीवट वृक्ष के मूल में अलौकिक प्रकाशमान वन में गोपियों के समूह में श्यामसुंदर को नृत्य करते हुए देखा । वहां ब्रह्मादिक देवता कोटि जन्मों के संचित पुण्य के फल स्वरूप गोपिका भाव को प्राप्त होकर सुन्दर विहार कर रहे हैं। दंडकवन वासी, श्रुतियाँ सब गोपिका भाव में भावित हो रहे हैं। सब मिलकर प्रभु के साथ महासौभाग्य से शोभित होकर क्रीड़ा कर रहे हैं। वहां रस से परिपूर्ण होकर खूब ऊंचे स्वर से रसोन्मत्त होकर गान किया। इसे देखकर सभी गोपियों को और माधव प्रभु को खूब आनन्द हुआ। वहां हमने राजा परीक्षित को देखा । पूर्वकाल में हमने इनको भागवत सुनाई थी। इसलिए हमको भागवत का पुरातन वक्ता जानकर इन्होंने हमें प्रणाम किया और हाथ जोड़कर प्रेम से बोला ~

भगवंस्त्वत्प्रसादेन श्रुतं भागवतं मया ।
नित्य लीलालयो वासो लब्धो गोलोक संज्ञकः ॥
कृतार्थीकृत एवाहं भवता करुणात्मना ।
एष में प्रश्नविषयो वर्त्तते मुनिसत्तम ॥
कदाचिदिह खेलंतं कृष्णं वृंदावने वने ।
आगतः पुरुषः कोऽपि स्निग्धश्यामल विग्रहः ॥

समानरूपमाधुर्य्यः समवीर्य्यवयोगुणः ।
चापेषुधिधरो वीरो वामे च प्रिययान्वितः ॥
तं दृष्ट्वा प्रिययां साकं ववन्दे नन्दनंदनः ।
रामाय नम इत्युक्त्वा कृष्णस्तत्राविशत्स्वयम् ॥
तं दृष्ट्वा चकिता आसन्देवीदेवगणा अपि ।
आगंतुकः सपुरुषो वनमालाधरो विभुः ॥
मुरलीभूषितो भूत्वा विरेजे रासमण्डले ।
गोपीमण्डलमध्यस्थो ननर्त्त च तथा पुरा ॥
एतच्च चरितं दृष्ट्वा विस्मिता अभवन्सुराः ।
एतत्ते ब्रह्मराताय पृच्छामि च मुहुर्मुहुः ॥
किमेतद्भगवन्नासीत्कृष्णस्य पुरुषस्य च ।
किमर्थं भगवान्कृष्णः पुरुषं प्रविवेश ह ॥
एतन्मे वद योगीन्द्रं शुक कारुणिकोत्तम ।
तदाहं विष्णुराताय प्रावोचं मधुरं वचः ॥
इति श्रीशुकसंहितायां प्रथमाध्याये द्वितीयः पादः ॥

राजा परीक्षित बोले - हे भगवन् ! पूर्वकाल में आपके मुख से मैंने श्री भागवत सुनी थी । उसी के फल स्वरूप श्री भगवान की नित्य लीला स्थली गोलोक का वास हमें प्राप्त हुआ। हे करुणा स्वरूप ! हे मुनिसत्तम! आपने हमें कृतार्थ कर दिया है। मेरे हृदय में एक प्रश्न है कि एक बार श्री कृष्णचन्द्र जी जब वृन्दावन में क्रीड़ा कर रहे थे उसी समय सुकोमल सुस्निग्ध श्यामल स्वरूप वाले कोई एक पुरुष आए । उनकी रूप माधुरी और वीर्यादि गुण श्री कृष्ण के ही समान थे। उनके हाथ में धनुष बाण और वाम भाग में उनकी प्रिया सुशोभित थी। उन पुरुष को देखकर अपनी प्रिया सहित श्री नन्दनन्दन ने "रामाय नमः" ऐसा कहकर उन्हें नमस्कार किया। और उसी स्वरूप में दोनों प्रियाप्रीतम (श्री राधा कृष्ण)। इसको देखकर सभी देवी देवता गण चकित हो गए। अब वही पुरुष वनमाला और मुरली धारण करके रासमण्डल में प्रकाश करने लगे और उसी प्रकार नृत्य करने लगे जिस प्रकार श्री कृष्ण पूर्व में कर रहे थे। यह देखकर सभी देवताओं को बड़ा आश्चर्य हुआ । इसलिए हे भगवन्! मैं आपसे बार बार पूछता हूं कि श्री कृष्ण और वह पुरुष कौन हैं ? किस लिए कृष्ण भगवान पुरुष के स्वरूप में प्रवेश कर गए । हे

करुणा के स्थान योगिराज श्री शुकाचार्य्य स्वामी ! मुझे यह रहस्य बताइए। तब परीक्षित जी के बोध के लिए उन्होंने यह मधुर वचन कहे -

श्री शुक उवाच

शृणु राजन्निदं तत्त्वं विष्णुरात रहस्यकम्।
रामस्य देवदेवस्य परमैश्वर्य्यसूचकम्॥
न वै स पुरुषः कश्चिन्न वे स पुरुषोत्तमः।
श्रीरामसंज्ञितं धाम परं ब्रह्म सनातनम्॥
कदाचिच्चित्रकूटाद्रौ क्रीडंतं पुरुषोत्तमम्।
मृगयाभिरतं वीरं रामं प्रोवाच जानकी॥

हे राजन् ! हे विष्णुरात् ! ये परम रहस्य सुनो जो श्री राम (जो देवों के भी परम देव हैं) उनका परम ऐश्वर्य सूचित करता है। वे न तो कोई पुरुष(साधारण मनुष्य) हैं, न कोई पुरुषोत्तम(साधारण मनुष्यों में उत्तम) हैं, वह तो श्री रामधाम(साकेत) वासी सनातन परब्रह्म श्री राम हैं। कभी चित्रकूट पर्वत में क्रीड़ा करते हुए पुरुषोत्तम (सभी भगवद पुरुषों में उत्तम) भगवान जो वीर हैं और मृगया में रत हैं, उनसे श्री जानकी ने कहा -

श्री सीतोवाच

अतः परं प्रिय भवान् मृगयातो निवर्त्तताम्।
प्रस्वेदकणिकाभिस्ते मुखचन्द्रो विभूषितः॥
सूर्य्योऽपि चान्द्रिमाकांतस्तपस्तेपे महातपाः।
किंचित्कुंजं समालंब्य स्थीयतामधुना प्रिय॥
इत्युक्तः प्रियया रामो माधुरी कुंजमुत्तमम्।
प्राविशच्चित्रकूटाद्रिं कंदरांतरशोभितम्॥
नवमल्लिनामोदप्रमोदमधुभिर्वृतम्।
नवचूतांकुरास्वादमंजुलीलोपकोकिलम्॥
चन्दनानिल सौरभ्यसुवासितदिगंतरम्।
लवंगलतिकापाकसमुद्भररजःकणम्॥
सर्वर्तु शोभया जुष्टं विशालसरसान्वितम्।

फुल्लकह्लारकमल कदंबैकसुगंधिना ॥
तत्र गत्वा दंपती तो सीतारामौ मनोहरौ ।
प्रसूनशय्यां मृदुलामध्यासतुरनुत्तमाम् ॥
दर्शनस्पर्शनालापप्रिय संगसुनिर्वृतौ ।
तत्र सुस्थं प्रियं राम सीता प्रोवाच सस्मितम् ॥

श्री जानकी जी ने कहा - हे प्रिय ! अब आप मृगया से निवृत्त होइए ! क्योंकि पसीने के बिंदुओं से आपका मुखचन्द्र विभूषित हो रहा है। सूर्य भी अत्यंत तप रहा है। इसलिए हे प्रिय ! कुछ समय थोड़ा कुंजलता के अवलंब में विश्राम कीजिए । ऐसा कहकर प्रिया प्रीतम श्री सीताराम जी दिव्य माधुरी कुँज में प्रवेश कर गए जो कि चित्रकूट(कामद) गिरि के कंदराओं में सुशोभित है। यह स्थान नवीन मल्लिका अर्थात अशोक वनों से तथा पुष्पों का रसास्वादन करने वाले सुन्दर भ्रमरों से युक्त है। नवीन आम्रादि सुस्वादु फलों से सुशोभित है। यहां भ्रमर गुंजायमान हो रहे हैं, कोकिलाएं सुंदर कल कल स्वरगान कर रही हैं, मलयवासयुक्त शीतल सुगन्ध मन्द वायु बह रही है। इससे दसों दिशाएं सुगन्धित हो रही हैं। और लवंग लतिकाओं से रज उड़ रही है। सभी ऋतुएं शोभायमान हैं। इस कुंज के मध्य में एक विशाल सर (पोखर) जो विचित्र मणियों से निर्मित है, शोभा दे रहा है। जिसमें चारों प्रकार के कमल खिले हुए हैं। और सभी दिशाएं कदम की सुगन्धि से सुगन्धित हो रही हैं। वही पर जाकर प्रियाप्रीतम श्रीसीतरामजी अति सुन्दर कोमल पुष्प शैय्या पर (दर्शन स्पर्शन आलाप प्रिय संग के निमित) सावधान होकर बैठे । तभी अपने प्रिय श्री रामजी को जानकी जी हंसकर बोली -

आवां प्रियनिकुंजेऽत्र सर्वर्तु सुखशोभितम् ।
कच्चिन्न विहरिष्यावो राधाकृष्णाविव व्रजे ॥

श्रीराम उवाच -

त्वदंशा एव राधा सा प्रिये वृन्दावनेश्वरी ।
मदंश एव नियतः कृष्णो गोपेन्द्रनंदनः ॥
इत्युक्त्वा दर्शयामास तत्र वृंदावनं महत् ।
यमुनाजलकल्लोलशीतलीकृतमारुतम् ॥
नित्यं गोवर्द्धनगिरिच्छायाहरितकाननम् ।

विस्तीर्णद्वादश वनं रमणीयसुरोचितम् ॥
द्वादशोपवनारामो वैकुण्ठालयसौख्यदम् ।
नंदगोकुलमानन्दं हंसाकलितगोधनम् ॥
नृत्तकीमण्डलायुक्तं वत्सवर्द्धितशोभितम् ।
उदारनंदगृहिणी यशोदाभाग्यभूषितम् ॥
कृष्णरासरसोन्मत्तगायद्गोपीकदंबकम् ।
कृष्णं च राधिकायुक्तं दर्शयामास राघवः ॥
श्रीमद्युयुगलनाट्येन नटंतं प्रेयसीयुतम् ।
दर्शयित्वा प्रियां प्राह रामस्त्रैलोक्यसुंदरः ॥
रासे नृत्यन्सुरैर्दृष्टो रामस्त्रैलोक्य सुन्दरः ।

हे प्रिय ! यहां सभी ऋतुओं से शोभित इस दिव्य माधुरी कुंज में हमने ब्रज में सुशोभित श्री राधा कृष्ण के समान रास नही किया। इसलिए हमारी इच्छा है कि उसी प्रकार हमारा भी रास हो ! इसे सुनकर श्री राम प्रसन्न होकर बोले - हे प्रिये ! तुम्हारी अंश ही वृंदावनेश्वरी राधा हैं और मेरे ही अंश गोपेन्द्रनन्दन कृष्ण हैं। ऐसा कहकर श्री किशोरी जी को राघव जू ने वही पर दिव्य वृन्दावन का दर्शन कराया जहां यमुना जी का जल कल कल करके प्रवाहित हो रहा है, जहां शीतल सुगंध मंद वायु बहती है, जहां नित्य गोवर्धन पर्वत है, जिसकी छाया में हरित वन है जो सुन्दर है और देवत्व से युक्त द्वादश वन सुशोभित है। द्वादश उपवन हैं जो वैकुंठ के समान सुख प्रदान करने वाले हैं। श्री नंद जी का गोकुल हंस के समान गोधन से युक्त है। भिन्न भिन्न नृत्य स्थलियां हैं जो नर्त्तकी मंडलों से युक्त हैं। जहां छोटे छोटे बछड़े शोभा दे रहे हैं। बड़ी उदार नंद जी की धर्म पत्नी श्री यशोदा जी सुशोभित हैं। कृष्ण रास के रस में उन्मत्त गोपी गायों और कदंब वृक्षों के समूह से आच्छादित राधिका जी के सहित श्री कृष्ण ने श्री राघव प्रभु का दर्शन किया। अपनी प्रेयसी से युक्त श्री युगल स्वरूप को नृत्य करते देखकर अपनी प्रिया से त्रैलोक्य सुंदर (तीनों लोकों में सबसे अधिक सुन्दर) श्री राम ने कहा -

प्रिये तव ममासौ च द्वाविमौ सह दंपती ।
माधुर्य्यलीलाकलिकाललितौ विश्ववभौ ॥
ततस्तद्युगलं श्रीमद्राधाकृष्णात्मकं महत् ।
सीतारामात्मकं युग्मं प्राविशन्नतिपूर्वकम् ॥
ततः प्रवृत्ते रामश्च सीतारामप्रधानकः ।

गोपीजनकरोद्भूतमृदंगाऽऽनककाहलः ॥
मिथः सहचरीवृन्दकरतालविराजितः ।
झर्झरः शंखभेर्य्यादिवादित्रविततध्वनिः ॥
युगलाऽनुनयानंदी युगलो वयदीपितः ।
मिथो युगलनाटयैक्यतुष्टाऽखिलसखीजनाः ॥
श्रीराममुरलीनादवर्द्धितानि सकौतुकः ।
सीता कलस्वरालापमुह्यत्सहचरीगणः ॥
कामोत्साहप्रदालापचुंबनालिंगनादिभिः ।
नर्मस्पर्शैर्नर्महासैर्भावैश्च बहुरूपकैः ॥
अनेकैर्मधुरालापैर्भूपितश्च महोत्सवः ।
शश्वद्युगलनाट्येन सीतारामौ विरेजतुः ।
कदाचिद्गोपिका तुल्य सख्या केनात्मना विभुः ॥

हे प्रिये ! तुम्हारे और मेरे स्वरूप ही यह दोनों प्रिया प्रीतम दिव्य दंपति राधा कृष्ण हैं। वे दिव्य माधुर्य लीला से युक्त हैं और संसार को दोनों प्रिय हैं। ऐसा कहने के पश्चात ही महान युगल स्वरूप श्री राधा कृष्ण दिव्यतम् युगल श्री सीतारामस्वरूप में प्रविष्ट हो गए। इसके पश्चात प्रधान रूप में केवल श्री सीताराम जी का स्वरूप ही रह गया और वे ही वृंदावन में अपनी प्रिया के संग रासलीला करने लगे। उस समय गोपियों के हाथ में बड़े अद्भुत मृदंगादि बाजे बजने लगे , सखियों के वृंद झांझ, शंख, भेरी, बीन, मुरचंग आदि भिन्न भिन्न बाजों से स्वर गान करने लगी। उस समय सब युगल स्वरूप के अनुकूल ही कार्य करने लगी। और युगल सरकार भी कैशोर अवस्था में स्थित हो गए और दोनों ने परस्पर एक भाव में अनन्त रस से परिपूर्ण होकर ऐसा नृत्य किया कि सभी सखी गण तृप्त हो गईं। श्री राम जी ने मुरलीनाद और नाना प्रकार के कौतुक से सभी को दिव्य आनन्द प्रदान किया उसी प्रकार श्री जानकी जी ने सुन्दर स्वरालाप से सब सहचरी गणों को मोहित कर दिया । वहां अप्राकृत चुम्बन, दिव्य आलिंगन आदि से रामजी के लिए दिव्यकामोत्साह बढ़ रहा है। कोमल स्पर्श से, कोमल हास से, कोमल भाव से अनेक विधि , मधुर आलाप से श्री सीताराम जी ने रास मण्डल को दिव्य आनन्द से परिपूरित कर दिया। निरंतर श्री युगल स्वरूप श्री सीताराम जी का नृत्य हो रहा है, कभी वे गोपिका समान हो जाते हैं, कभी सखीरूप हो जाते हैं, कभी गुप्त हो

जाते हैं, कभी गुप्त हो जाते हैं फिर कभी प्रकट हो जाते हैं इस प्रकार त्रिलोक सुन्दर श्री राम जी को रास करते हुए सभी देवताओं ने देखा।

कदाचिद्गोपिकायुग्ममध्यवर्तीकिशोरकः ॥
रासे नृत्यन्वभौ रामो नीलमेघमनोहरः।
रत्नप्रतप्तसौवर्णकिरीटशिखिपिच्छकः ॥
गुंजाहारधरः श्रीमान्प्रोल्लसज्जघनाम्बरः।
नृत्यतालकरोद्भावमणिरत्नांगुलीयकः ॥
मुरलीनादमधुरः कोटिकंदर्पसुन्दरः।
एवं नंदात्मजः कृष्णस्वावतारसमापनम् ॥
रामं प्रविशति श्यामं सच्चिदानंद विग्रहम् ॥
सोऽद्यापि क्रीडति गिरौ चित्रकूटे मनोहरे ॥
नित्यं वृन्दावने एव माधुरीकुंजमध्यगे।
आगामिनि द्वापरांते कंसादिभिरुपद्रुते ॥
लोके धर्मस्य रक्षार्थं वसुदेवस्य वेश्मनि।
प्रादुर्भूय व्रजेन्द्रस्य गोकुले विहरिष्यति ॥
एवं कृष्णोऽविशद्रामे पूर्णे स्वानन्दविग्रहे।
दृष्टो रामः परं तत्त्वं यत्र चापि न गोचरः ॥
इति श्रीशुकसंहितायां प्रथमाध्याये तृतीयपादः ॥

कभी दो गोपियों के मध्य में नित्य किशोर प्रकट हो जाते हैं, ऐसे नील मेघ के समान मनोहर श्री राम रासमण्डल में नृत्य करते हैं। उनके सिर पर रत्नजड़ित प्रतप्त सुवर्ण (तपाए हुए सोने की कांति वाला) का किरीट शोभा दे रहा है, गले में गुंजा की माला शोभा दे रही है, कांतियुक्त तड़ित से पीताम्बर शोभित है, नृत्य में भावयुक्त अरुण हाथ हैं जिनमें मणि रत्नों से जड़ित मुद्रिका शोभायमान है। मुरली की नाद बहुत ही मधुर है। कोटि कोटि कामदेवों को लज्जित करने वाला प्रभु का सौंदर्य है। ऐसे श्री नंदात्मज कृष्ण स्वावतार कारण (अपने अवतार के कारण) श्री राम जी के सच्चिदानन्द स्वरूप में प्रवेश करते हैं। वही युगलपरब्रह्म आज भी सुन्दर चित्रकूट पर्वत में क्रीड़ा करते हैं, वह चित्रकूट ही नित्य वृंदावन है जिसके मध्य में स्थित माधुरी कुंज में युगल सरकार श्री सीतारामजी नित्य रास क्रीड़ादि करते हैं। वही श्री राम आगे द्वापरान्त में कंसादिक के उपद्रव से लोक

में धर्म की रक्षा के लिए वसुदेव गृह में व्रजेन्द रूप से प्रकट होकर गोकुल में विहार करेंगे । ऐसे श्रीकृष्ण अपने पूर्णानन्द विग्रह श्री राम (अर्थात उनके जो परम तत्त्व हैं जिनसे आनंद प्रदान करने का गुण श्री कृष्ण को प्राप्त हुआ है) में प्रवेश करते हैं। इसलिए आपने गोलोक में इस लीला के माध्यम से श्री राम जी का असाधारण परत्व देखा (जो सभी को अगोचर है)।

(भाव :- श्री राम जी ही परतत्त्व हैं ऐसा श्री परीक्षित जी ने गोलोक में इस प्रवेश लीला के माध्यम से जाना)

तत्र रासे प्रादुरासीद्ब्रह्माणी ब्रह्मकोटयः ।
वैष्णवी विष्णुकोटयश्च रुद्राणी रुद्रकोटयः ॥
सर्वाश्च देवतास्तत्र गोपिकाभावभाविताः ।
रासमण्डलमध्यस्था ननृतुः स्वामिना सह ॥
तथा षष्टिसहस्राणि दण्डकारण्ययोगिनाम् ।
गोपीभावं समासाद्य रेजुः श्रीरासमण्डले ॥
श्रुतयश्चैव कालश्च रासमण्डलमध्यगाः ।
गोपीरूपधरा रेजुर्महासौभाग्यभूषिताः ॥
कालश्च तत्र नियतं पूर्णिमाशारदी हि सा ।
वातश्च तत्र सततं सुरभिश्चंदनद्रुमैः ॥
भूमिश्च रत्नमाणिक्यप्रतप्तकनकोऽज्वला ।
जलं यमस्वसा साक्षात्पीयूषाधिकसुंदरम् ॥
उज्ज्वलांशुचयो यत्र मध्यरात्रगतः शशी ।
राकापि या प्रभोर्लीला सा नित्यैव न संशयः ॥
सीता च सुंदरी यत्र सर्वलीलाधिदेवता ।
चित्रकूटाद्रिके रम्ये यवृंदावनमद्भुतम् ॥
गोलोकोऽयं स एवात्र दृश्यते पुरतस्तव ।
सीताऽऽभिलाषसंभूत्ये श्रीरामेण विनिर्मितः ॥

वहां श्री राम जी के रास में कोटि ब्रह्मा कोटि कोटि ब्रह्माणी कोटि लक्ष्मी कोटि विष्णु कोटि पार्वती कोटि शिव उत्पन्न हुए। वहां सभी देवता लोग गोपी भाव को प्राप्त हो गए और अपनी स्वामिनी के सहित रासमण्डल में नृत्य करने लगे। उसी प्रकार 60 हजार दंडक वनवासी सब ऋषि लोग भी गोपिका भाव को प्राप्त

होकर रासमंडल में प्रकाश करने लगे और सभी श्रुतियां तथा काल ये सब भी रासमण्डल में गोपीरूप धरके महासौभाग्य से भूषित होकर प्रकाश करने लगे। वहां काल भी नियत होकर शरद पूर्णिमा को प्रकट किया। वहां मलयवास युक्त सुगंधित वायु बहने लगी। पृथिवी की कांति माणिक्यमय तप्त कांचन के समान हो गई और जल अमृत से भी अधिक सुंदर हो गया। और मध्य रात्रि होने से चन्द्रमा भी उज्ज्वल और पवित्र हो गया। उसी प्रकार प्रभु की रासलीला में पूर्णिमा रात्रि भी उज्ज्वल पवित्र हो गई। जहां त्रिभुवन सुन्दरी श्री जानकी जी, जो सभी लीला की अधिदेवता हैं और जहां चित्रकूट पर्वत में ही वह सुन्दर अद्भुत वृन्दावन है। वही सर्वोपरि गोलोक आपको यहां दिखाई पड़ता है। उस गोलोक का निर्माण श्री सीताजी की अभिलाषा पूर्ण करने हेतु श्री राम जी ने किया है। यह सुनकर राजा बोले

विष्णुरात उवाच

कथं सीताऽभिलाषेण गोलोक निर्ममे प्रभुः ?
एतन्मम समाचक्ष्व मुनीन्द्र परिपृच्छतः ॥

श्रीशुक उवाच

कल्पादौ भगवान् रामः स्वेऽच्छा मात्रेणचोदितः।
त्रैलोक्यं कृतवाञ्चगादाविर्भावं प्रदर्शयन् ॥
अमोघमुप्तवान्बीजमंशुं सप्तार्णवेषु सः।
हिरण्यगर्भसंकाशः सूर्यकोटिसमप्रभः ॥
ततश्चराचरस्यादौ तत्त्वसृष्टिं विनिर्ममे।
तेषु चैतन्यमाधाय ब्रह्माण्डं संजघाट सः ॥
उच्चावचानि भूतानि रचयामास विश्वकृत।
मही रचितवान्देवः सप्तसागरसंवृताम् ॥
पर्वतान् विविधान्रम्यान्देवगंधर्व भोगवान्।
सरांसि रम्यरूपाणि राजहंसाश्रयाणि च ॥
उत्फुल्लकमलामोदवारीणि रुचिराणि च।
मेरुं रचितवांस्तत्र स्थानानि त्रिदिवौकसाम् ॥
एवं कृत्वा जगत्सर्वं सदेवासुरमानुपम्।
देवानामसुराणां च मनुष्याणां च सौख्यदम् ॥

वासं प्रकल्पयामास गृहारामादिशोभितम् ।
ततः सीता स्वयं प्राह रामं कमललोचनम् ॥

राजा परीक्षित बोले - हे मुनीद्र! श्री जानकी जी के अभिलाषा को पूर्ण करने के लिए श्री राम जी गोलोक का कैसे निर्माण किए ? इसको कहिए ! श्री शुकाचार्य स्वामी जी बोले :- कल्प के आदि में भगवान श्री राम जी ने अपनी इच्छा की प्रेरणा मात्र से तीनों लोक अपने शरीर से उत्पन्न किया और वहां प्रथम वैष्णवी वीर्य तेज कोटि कोटि सूर्य से प्रकाशित सुवर्ण कांतिवाला एक गोलाकार अंड हो गया । उस अंड में सर्व लोक रचनाकार हिरण्यगर्भ ब्रह्मा प्रकट हुए। उन्ही से सभी चराचर पैदा हुए उसी में चैतन्य स्थापन करके कोटि कोटि ब्रह्माण्ड बनाए । और सभी योनियों वाले जीवों का निर्माण किया और सप्त सागर युक्त पृथिवी को रचा तथा देव गंधर्व के भोगवान सुंदर नाना प्रकार के पर्वतों को रचा। सुंदर रमणीय राजहंसों से युक्त सरोवर रचे जिनमें दिव्य जल भरा है और नाना प्रकार के आनंद दायक कमल खिले हुए हैं। एक लक्ष योजन वाले सुमेरू पर्वत रचे। इंद्रादि ३३ कोटि देवताओं के भिन्न भिन्न स्थानों को रचा । ऐसे देवता असुर मनुष्यों सहित सम्पूर्ण संसार को रचकर फिर मनुष्यों को सुख देने वाले घर बाग सुंदर रचे तब कमललोचन श्री राम जी से स्वयं जानकी जी बोली -

श्री सीतोवाच

इच्छामात्रेण ते कांत सरत्नं भुवनत्रयम् ।
अतीव सुंदरं भाति प्रासाद इव भूयते ॥
स्वर्गमृत्युतलांतस्थः सततं सुखमासने ।
स्वेषु स्वेषु निवासेषु गृहारामादिमत्सु च ॥
पुरातनमिदं स्थानमस्माकं तु तदेव हि ।
कोशलाख्यं पुरं दिव्यं प्रलयेऽप्यविनश्वरम् ॥
इदं त्रैलोक्यमखिलं प्रलयेऽनंक्ष्यति प्रभो ।
अविनश्वरमेवैकमयोध्यापुरमद्भुतम् ॥
तत्रैव रमसे नाथ ह्यानन्दरसनिर्वृतः ।
नवीनं न कृतं स्थानं स्वभोगाय कथं प्रभो ॥
स्वतंत्रेच्छोऽसि भगवंस्तथापि च निबोध मे ।
मदुत्कण्ठावशेनैव कुरु स्थानं मनोरमम् ॥
अयोध्यायाः प्रतिकृतिर्यत्र सर्वं विलोक्यते ।

राजानः कुर्वते नव्यं पुरस्थानेषु सत्स्वपि ॥
एवमभ्युदितो रामः प्रियया सामिलापया ।
सर्वेषां चैव लोकानामुपरि स्थानमद्भुतम् ॥
गोलोकं कल्पयामास प्रादुर्भाव्य स्वलोकतः ।
अयोध्यायाः प्रतिकृतिर्यत्र सर्वापि दृश्यते ॥

श्री जानकी जी बोली - हे स्वामी ! आपने अपनी इच्छा मात्र से सर्व रत्नों से युक्त तीनों लोकों को अति सुन्दर प्रकाशमय महल के समान(भूलोक, भुवः लोक , स्वरलोक, जनलोक, तपलोक, सत्यलोक तथा अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, महातल, पाताल पर्यन्त) अपने अपने निवास स्थान में घर बाग तलाबादि रचा परन्तु यह मेरा स्थान पुरातन है जो कि कोशल(अयोध्या) साकेत नाम से अतिप्रसिद्ध है जिसका प्रलय में भी नाश नही होता है। यह तीनों लोक प्रलय में नाश हो जाते हैं केवल एक आश्चर्यमय अयोध्या ही अविनाशी पुरी है हे नाथ ! हम उसी पुरातन स्थान में रमण विहार करते हैं। हे नाथ ! स्वभोग के लिए आपने नवीन स्थान का निर्माण क्यों नही किया ? हे भगवन् ! यद्यपि आप स्वतन्त्र हैं तथापि मैं आपसे निवेदन करती हूं कि मेरी उत्कंठा के वशीभूत आप एक मनोरम स्थान का निर्माण करिए। जहां अयोध्या कि ही प्रतिकृति (प्रतिबिंब) सर्वत्र दृष्टिगोचर होती रहे। राजालोग भी नवीन पुरी का स्थापन करते हैं। उसी प्रकार आप अपनी प्रिया के लिए पुरी का निर्माण करिए। तब श्री सीता जी की अभिलाषा को पूर्ण करने के लिए सभी लोकों से ऊपर अद्भुत स्थान गोलोक को स्वलोक साकेतपुरी के अंश से अपनी दिव्य कल्पना से प्रकट किए जहां सभी कुछ अयोध्यापुरी का ही प्रतिबिंब दिखाई पड़ता है।

यमुनायाः परिणता सरयू सरसा सरित् ।
अभूद्गोवर्द्धनत्वेन दिवि रत्नमयो गिरिः ॥
प्रमोदवनमत्रासीद्दिव्यं वृन्दावनं वनम् ।
पारिजाततरुर्जातो वंशीवटतरुर्हि सः ॥
ते च रासविलासाद्याः प्रादुरासुः समंततः ।
आभीरोऽसुखिनो नाम रामधात्रीपतिः पुरा ॥
स एव समभून्नंदो मांगल्या च यशोदिका ।
त एव गोपीगोपाद्या लीलापरिकराश्च ते ॥
सैव श्रीजानकी देवी वृषभानुसुताऽभवत् ।

अशोकवनगा तत्र ह्यत्र वृंदावनेश्वरी ॥
तया सह बभौ रामो वंशीवादन कौतुकी ।
नित्यरास विलासादिकुर्वाणः सुमनोहरम् ॥
गोलोकमखिलं वीक्ष्य लीलापरिकरान्वितम् ।
सद्यः प्रसन्नहृदया प्रोवाच निजवल्लभम् ॥

श्री प्रियोवाच

दृष्ट्वेदमद्भुतं स्थानं संपूर्णा मे मनोरथाः ।
अयोध्यायाः प्रतिकृतिः क्वचित्तावत्ततोधिकाम् ॥
आवां यत्रैव रंस्यावः सुचिरं कामकेलिभिः ॥
अतीव सुंदरे स्थाने सच्चिदानंदमंदिरे ॥
एवमुक्तस्तया सार्द्धं रेमे वृन्दावने प्रभुः ।
यथा गायंति मुनयो महाभावविभूषिताः ॥
इति श्रीशुकसंहितायां प्रथमाध्याये चतुर्थपादः ॥

श्री सरयू जी ही दिव्य यमुना रूप में परिणत हुई । श्री रत्नगिरि (मणिपर्वत) से ही गोवर्धन पर्वत हुआ और प्रमोद वन से ही दिव्य वृन्दावन हुआ। कल्प वृक्ष से ही वंशी वट हुआ और उस रास विलास से जो उत्पन्न हुए आभीर(गोप) जो पूर्व में दुखित नाम वाले धात्रीपति थे वही नन्द जी हुए और मांगल्या नाम की गोपी ही यशोदा जी हुई और पूर्व लीला में जो परिकर थे वही सब गोपी गोपादिक हुए। श्री जानकी जी ही राधा जी हुई और अशोकवन में जो देवी रही वही वृन्दावनेश्वरी(वृन्दादेवी)हुई , उनके सहित श्री राम जी राधा कृष्ण होकर वंशी नाद में निपुण बड़े कौतुक करके नित्य रास विलासादि करके सुन्दर लग रहे हैं। लीला परिकरों से युक्त अखिल गोलोक को देखकर सहज ही प्रसन्न होकर श्री जानकी जी अपने स्वामी से बोली -

इस अद्भुत स्थान को देखकर मेरे संपूर्ण मनोरथ सिद्ध हो गए । यहां इस स्थान में श्री अयोध्या का विभव तो है कदाचित विशेष नवीन होने के कारण यह मधुर लीलाओं का रसास्वादन करने के लिए यह अधिक विशेष है। यही पर आकर हम दोनों इस अतिसुंदर स्थान जो सच्चिदानंद मंदिर है , यहां रस से परिपूर्ण सुचिर काम केलि करेंगे । इस प्रकार मुक्त रूप से श्री सीताराम जी वृंदावन में

विहार करने लगे जिस लीला का गान करके मुनि जन महाभाव से विभूषित हो जाते हैं।